eISSN:2581-4885
DEV SANSKRITI
VISHWAVIDYALAYA
PUBLICATION

RESEARCH ARTICLE

राष्ट्र के नवनिर्माण श्रृंखला में अग्रणी – अश्वमेध महायज्ञ

सतीश चन्द्र कैवर्त [1*], आरती कैवर्त [2], कृष्णा झरे [3]

[1] शोधार्थी, दर्शनशास्त्र, देव संस्कृतिविश्वविद्यालय, गायत्रीकुन्ज–शान्तिकुन्ज हरिद्वार, भारत
[2] सहायक अध्यापिका, वैज्ञानिक अध्यात्मवाद विभाग, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, गायत्रीकुन्ज–शान्तिकुन्ज हरिद्वार, भारत
[3] विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, गायत्रीकुन्ज–शान्तिकुन्ज हरिद्वार, भारत

*CORRESPONDENCE
Address Satish Kaiwart, Department of Oriental Studies, Dev Sanskriti Vishwavidyalaya, Gayatrikunj-Shantikunj Haridwar, India
Email
satish.kaiwart@dsvv.ac.in

PUBLISHED BY
Dev Sanskriti Vishwavidyalaya Gayatrikunj-Shantikunj Haridwar, India

OPEN ACCESS
Copyright (c) 2024 Satish Kaiwart et al.
Licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License

सारांश:

समग्र भारत के स्वर्णमयी निर्माण में अतीत से वर्तमान में अग्रणी भूमिका के रूप में जो प्रक्रियाएँ क्रियाशील रहीं है – उसमें भारतीय तत्त्वज्ञान का प्रतीक यज्ञ और वैदिक अध्यात्मज्ञान की जन्मदात्री माँ गायत्री को माना गया है। एक को भारतीय संस्कृति की जननी और दूसरे को भारतीय धर्म का पिता कहा गया है। साथ ही दोनों अन्योन्याश्रित माने गये हैं। महर्षि हारीत के अनुसार– यज्ञ के द्वारा हमें समस्त पाप–संताप जैसे समस्याओं से निजात मिलता है तथा परमात्मा के लोक में स्थान भी प्राप्त होता है। यज्ञीय जीवन जीकर किए गये कर्मों वाला जीवन ही श्रेष्ठतम जीवन है। आचार्यश्री के अनुसार– बलिवैश्य यज्ञ पारिवारिक जीवन में सुख–समृद्धि, आस्तिकता, आध्यात्मिकता और पवित्रता बनाए रखने के लिए, बाजपेय यज्ञ जनमानस समुदाय की प्रसुप्त आत्मिक, बौद्धिक तथा नैतिक चेतना को जाग्रत करने के लिए, राजसूय यज्ञ शासन तंत्र में जमे हुए दूषित व पल्लवित समस्याओं को सुलझाने के लिए तथा अश्वमेध यज्ञ राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर में फैली समस्याओं के समाधान के लिए हुआ करते थे। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार – समृद्धि ही राष्ट्र है। राष्ट्र ही अश्वमेध है। राष्ट्रपरायण–अश्वमेध करें। आचार्यश्री के अनुसार– यज्ञ परमार्थ प्रयोजन हेतु एक उच्चस्तरीय श्रेष्ठतम पुरूषार्थ है। राष्ट्रीय भावनाओं में यदि सत्प्रवृत्ति का समावेश होता चला जाए तो यही वास्तविक यज्ञ है।

कूट शब्द: यज्ञमय जीवन, गायत्रीयज्ञ, राष्ट्रपरायण, अश्वमेध यज्ञ, आध्या–त्मिक यज्ञ

प्रस्तावना

समग्र भारत के स्वर्णमयी निर्माण में अतीत से वर्तमान में अग्रणी भूमिका के रूप में जो प्रक्रियाएँ क्रियाशील रहीं है–उसमें भा–रतीय तत्त्वज्ञान का प्रतीक यज्ञ और वैदिक अध्यात्मज्ञान की जन्मदात्री माँ गायत्री को माना गया है। सांस्कृतिक पुनरूत्थान के लिए हमें ज्ञान और विज्ञान की आवश्यकता होगी। इसके बिना कोई भी महान कार्य संपन्न नहीं हो सकेगा ।

भारतीय संस्कृति का बीजमंत्र गायत्री जो सद्ज्ञान का प्र–तीक है। उसी की शिक्षाओं और शक्तियों के आधार पर हमारी सारी विश्ववसुधा का ढाँचा खड़ा हुआ है। इस समग्र विश्व–वसुधा के केन्द्र का आधार यज्ञ ही रहा है। वेदों में कहा गया है कि यज्ञ को भुवन, इस जगती की – सृष्टि का आधार बिन्दु कहा है। यज्ञ और गायत्री के संयोग से ही समग्र अध्यात्म का जन्म होता है। [1]

यज्ञ को तीन चरणों में बाँटा गया है। व्यक्तिगत जीवन के उत्कर्ष में यज्ञों की भूमिका और सामाजिक जीवन में परिष्कार के लिए महायज्ञ सम्पन्न किये जाते रहे हैं। पर जब समग्र रा–ष्ट्र और वातावरण के आमूल–चूल परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव होती थी तब सार्वभौम स्तर पर अश्वमेध जैसे यज्ञों की ही परम्परा रही है। तथा उनका प्रत्येक्ष परिणाम भी उसी स्तर से बड़ा एवं क्रमशः बृहत्तर है। [2]

श्रीमद्भगवदगीता में यज्ञ की महत्ता का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। ऐसे बहुत से प्रसंगों का भागवत में वर्णन है जिससे यज्ञ की महाशक्ति का पूरा–पूरा परिचय मिलता है। ब्रह्मपुराण में प्रकरण आया है कि जिसमें कल्प के आरंभकाल में जिस समय सृष्टि की रचना की जा रही थी, उस समय अतिपुण्यमय महायज्ञ का अनुष्ठान सहस्र संवत्सर के लिए हुआ था। इस महायज्ञ के अनुष्ठाता स्वयं ब्रह्मा जी थे और उनकी पत्नी इला वहीं उपस्थित थी। [3]

तीर्थो की स्थापना वहाँ–वहाँ ही हुई जहाँ–जहाँ बड़े महा–यज्ञ संपन्न हुये। प्रयोग शब्द में ''प्र'' उपसर्ग को हटा देने पर 'याग' शब्द रह जाता है। याग–यज्ञ को प्रचुरता रहने के कारण ही यह स्थान तीर्थराज बना। काशी,वाराणसी के दशाश्वमेध घाट इस बात का साक्षी रहा है कि इन स्थानों में बड़े–बड़े यज्ञ संपन्न हुए है। [4]

स्कंद पुराण में प्रसंग है कि काशीराज दिवोदास ने काशी नगरी में अपने आदर्श नागरिकों के समृद्धि हेतु दस अश्वमेध नामक यज्ञों से महायोगेश्वर भगवान का यजन किया। उसी समय से दशाश्वमेध नाम से वह तीर्थ प्रख्यात हुआ। [5]

पुराणों में एक प्रसंग आती है जिसमें सूत जी ने ऋषियों को महायज्ञ के बारे में बताया – जहां विश्व की सृष्टि की इच्छा से सृष्टि के आदिकाल में सृष्टाओं ने हजारों वर्ष तक यज्ञ किया किया था। महान आत्माओं के इस दीर्घ एवं विशाल यज्ञ में धर्म की नेमि घूमते घूमते विदीर्ण हो गयी थी। इसलिए ऋषि मुनि पूजित उस प्रदेश का नाम नैमिषारण्य पड़ गया। [6]

एक बार शौनक आदि 88000 ऋषियों ने स्वर्ग प्राप्ति हेतु नैमिषारण्य के पवित्र क्षेत्र में दस हजार वर्ष तक लगातार दीर्घ महायज्ञ करने का संकल्प किया। उसी समय से वहाँ का वा–तावरण आध्यात्मिक एवं सकारात्मक उर्जा से परिपूर्ण है, उन्हीं यज्ञादि के पवित्र प्रभावों से आज भी वह क्षेत्र पवित्र यज्ञमय बना हुआ है। [7]

यज्ञ, महायज्ञ और अश्वमेध की यज्ञीय प्रेरणा एवं प्रासंगिकता

यज्ञ शब्द संस्कृत क्रिया "यज्" से लिया गया है, जिसका तीन गुना अर्थ है: देवताओं की पूजा (देवपूजन), एकता (संगति–करण) और दान (दान) यज्ञ का दर्शन समाज में सद्भाव में रहने का तरीका, समाज में उच्च मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा करने की जीवन शैली सिखाता है – जो वास्तव में आदर्श मानव संस्कृति का आधार है। कहा जाता है कि ब्रह्मांड के असीम विस्तार में सभी गतिविधियाँ एक भव्य शाश्वत यज्ञ (यज्ञ) से उत्पन्न हुई हैं ।

यज्ञ का शाब्दिक अर्थ है – नेक उद्देश्यों के लिए निस्वार्थ बलिदान। अहंकार, स्वार्थ और भौतिक आसक्तियों का त्याग और तर्कसंगत सोच, मानवीय करुणा और सभी के कल्याण के लिए समर्पित रचनात्मकता को अपनाना – वास्तव में सबसे अच्छा यज्ञ है जिसे सभी मनुष्यों को करना चाहिए। गायत्री और यज्ञ वैदिक संस्कृति की नींव हैं। गायत्री को सद्ज्ञान एवं यज्ञ को सत्कर्म का प्रतिनिधि माना जा सकता है। [9]

श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार – सम्पूर्ण क्रियाओं और पदार्थों को अपना और अपने लिए न मानकर केवल भगवान के लिए ही मानना "भगवदर्पण रूप यज्ञ" है। परमात्मा की सत्ता में अपनी सत्तामिला देना अर्थात् 'मैं' – पन को मिटा देना "अभिन्नता रूप यज्ञ" है। [10]

वेद्स्वरुपा माँ गायत्री जहाँ ज्ञान और शुद्ध बुद्धि प्रदान करती हें वहीं यज्ञ संगत, पुण्य, परमार्थ, सकारात्मकता, रच–नात्मकता जैसे संपूर्ण कार्यों को प्रेरित करता है। जो यज्ञ द्वारा पूजे जाते हैं, यज्ञमय हैं और यज्ञस्वरूप विष्णु भगवान हैं। यज्ञदेव ही सर्वशक्तिमान सर्वज्ञ परमेश्वर से व्याप्त है।

ईशावास्योपनिषद् के प्रथम श्लोक में बताया गया है कि अखिल ब्रह्माण्ड में, जो कुछ भी जड़–चेतनस्वरूप जगत् है। यह समग्र भूर्लोक ईश्वर से व्याप्त है, इस ईश्वर(सद्गुणों का सम्मुचय) को साथ रखते हुए,सहकारिता, उदारता एवं त्याग–पूर्ण जीवन जीते हुए भोगते रहो,कभी भी बाहरी जीवन के प्रति आसक्त मत होओ क्योंकि धन–भोग्य, भौतिकता पदार्थ किसी का नहीं है, यह विनाशकारी तथा पूर्णतः नश्वर है। [12]

आचार्य श्रीराम शर्मा जी के 'योग वशिष्ठ' में प्रसंग आया जिसमें विश्वामित्र ने कहा – हे मुनीश्वरों ! श्रीराम चंद्र जी ने सर्वज्ञ ज्ञान पूर्ण रूप से जान लिया है । इसके विपरीत जो लोग भोगों के चिंतन से, प्रभावित होकर अज्ञानजनित बंधन में पूरी

doi.org/10.36018/dsiij.23.339

तरह जकड़ जाते हैं। अर्थात विषयों– भोगों में होने वाले सुदृढ़ वासना को ही बंधन बताते है। जिसकी दृष्टि राग आदि दोषों से रहित है, वही तत्वज्ञ, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान यज्ञमय ईश्वर है। [13]

आत्मस्वरूप यज्ञ – इसके अनुसार गीताकार का आशय है– परमात्मा में ज्ञान द्वारा एकीभाव से स्थित होकर ब्रह्मरूप अग्नि में यजन करना। अर्थात् 'ब्रह्माग्नि' में जीवात्मा हविस्य के रूप में आहुति देना ही ज्ञानयज्ञ कहलाता है। [14]

अश्वमेध यज्ञमयी जीवन है इसके अनुसार ब्रह्मरूपी अग्नि में जीवात्मा की आहुति देकर जीवात्मा और परमात्मा की एकत्व भावना से होम संपादित करना श्रेष्ठतम पुरूषार्थ यज्ञ ,एक आध्यात्मिक जनप्रक्रिया है। [15]

यज्ञों में भी श्रेष्ठतम एवं महायज्ञ कहा जाने वाला वह कर्म यज्ञ है, जो व्यक्ति को ब्राह्मणत्व के पद पर स्थापित कर देता, ब्राह्मणत्व अर्थात् आज के तथाकथित मनुवाद के नाम पर आलोचना करने वाले जाति–वर्ण वाला ब्राह्मण नहीं– ज्ञानयज्ञ का संपादन करने वाला – देवत्व प्रधान जैसे रीति–नीति वाला जीवन जीने वाला। [16]

कठोपनिषद में एक प्रसंग यमराज और नचिकेता के मध्य जिसमें अग्निविद्या का वर्णन आता है, जिसके अनुसार "इस अग्नि या अध्यात्मिक यज्ञ का तीन बार अनुष्ठान करने वाला पुरूष ऋक्, यजुः, साम–तीनों वेदों से संबंध जोड़कर तीनों वेदों के तत्त्व–रहस्य के गुणों में निष्णात होकर, निष्कामभाव से यज्ञ, दान और तपरूप तीनों कर्मों को करता हुआ जन्म मृत्यु के बंधनों से तर जाता है। तथा अग्निदेव को भलीभांति जानकर निष्कामभाव से चयन करके उस अनन्त शान्ति को प्राप्त हो जाता है।" [17]

प्रज्ञानोपनिषद् के अनुसार, "हे प्राण ! तू ही देवताओं के लिए हवि पहुंचाने वाला उत्तम अग्नि स्वरुप अध्यात्म विद्या है। पितरों के लिए पहली स्वधा है। अथर्वा, अंगिरस आदि ऋषियों के द्वारा आचरित अनुभूत सत्य भी तू ही है।"(प्रज्ञानोपनिषद् श्लोक – 8) [18]

"हे प्राण ! तू सब प्रकार के तेज (शक्तियों) से सम्पन्न तीनों लोकों का स्वामी इन्द्र है। तू ही प्रलयकाल में सबका संहार करने वाला रूद्र है और तू ही सबकी भली भांति यथा योग्य रक्षा करने वाला है। तू ही अन्तरिक्ष में विचरने वाली वायु है तथा तू ही अग्नि, चन्द्र, तारे आदि समस्त ज्योतिर्गणों का स्वामी सूर्य है।" (प्रज्ञानोपनिषद् श्लोक – 9) [19]

माण्डूक्योपनिषद् के अनुसार सर्वेश्वर ही अश्वमेध है। अर्थात्–"यह सबका ईश्वर है, यह सर्वज्ञ है, यह सबका अन्तर्यामी है, यह परब्रह्म सम्पूर्ण जगत् का कारण है क्योंकि समस्त प्राणियों की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय का स्थान यही है।" (माण्डूक्योपनिषद् श्लोक 6) [20]

आचार्य श्री ने 'योग वशिष्ठ' में शुकदेव और जनक संवाद के एक उत्तर में बताया कि इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में एक अखंड परब्रह्म चिन्मय परमपुरुष परमात्मा के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं। [21]

आध्यात्मिक यज्ञ

जब तक मन से यज्ञ करना न आए, तब तक हवन मात्र से यज्ञ की वास्तविक उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता। अर्थात् अपनी कार्यशैली में मनोभाव पूर्वक अग्निहोत्र करने पर ही तथा यज्ञ का वास्तविक उद्देश्य अपने आप को परमात्मा के चरणों में सौंप देना है।मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार का अंतःकरण चतुष्टय, दसों इंद्रियों, दसों प्राण आदि आंतरिक संपदाओं को भी जीव परमात्मा को सौंपता है, इनकी आहुति भगवान के चरणों में लगा देता है, तभी सच्चा यज्ञोद्देश्य प्राप्त होता है। [22]

इस आध्यात्मिक यज्ञ में आत्मा यजमान, श्रद्धा यजमान की पत्नी, हृदय वेदी, वेद शिखा, वाणी होता, प्राण उद्गाता, चक्षु अध्वर्यु, मन ब्रह्मा, कान आग्नीध्र, मुख आहवनीय अग्नि है। यज्ञपुरुष परमात्मा ही है। इसलिए यज्ञपुरुष भगवान को सर्वव्यापी मानकर उसे अपनी अंतरात्मा में धारण करना भी आध्यात्मिक यज्ञ है। [23]

यज्ञ में सम्पूर्ण रूप से पल्लवित उनके गुणों का अभिवर्धन कर वैयक्तिक उन्नति और सामाजिक प्रगति का सारा आधार सहकारिता, त्याग, परोपकार आदि प्रवृत्तियों पर निर्भर है। यदि माता अपने रक्त–मांस में से एक भाग नये शिशु का निर्माण करने के लिए न त्यागे, प्रसव की वेदना न सहे, अपना शरीर के वात्सल्य प्रेम से उसे दूध न पिलाए, पालन–पोषण में कष्ट न उठाए और यह सब कुछ नितान्त निःस्वार्थ भाव से न करे, तो फिर मनुष्य का जीवन–धारण कर सकना भी संभव न हो। इसलिए कहा जाता है कि मनुष्य का जन्म यज्ञ भावना के द्वारा या उसके कारण ही संभव होता है यही सच्चा जीवन प्रदान करने वाला पूर्ण मातृत्व एवं वास्तविक यज्ञ है। [24]

अश्वमेध यज्ञों की आध्यात्मिक एवं भौतिक फलश्रुतियों तो और भी विशिष्ट अधिक विशद है। मध्ययुग में अश्वमेध का नाम लेते ही युद्ध का सा बोध होने लगा था, लोग इसे शौर्य पराक्रम से किया करते थे, किन्तु बाद में यह लोककल्याण की दृष्टि से सम्पन्न किये गये विशिष्ट महायज्ञ के रूप में जाने गये । इन अश्वमेध यज्ञों की महिमा से वेद, उपनिषद् दर्शन एवं पुराणों के पन्ने भरे पड़े हुए हैं। प्राचीनकाल में वह प्रकृति संतुलन, देव–अनुग्रह और राष्ट्र संगठन के रूप में सम्पन्न किये जाते रहे हैं। [25]

अश्वमेध यज्ञ में जिनने भी निष्काम भाव से किये आहुति प्रदान किया बदले में फलस्वरूप गंगा–जमुना स्नान का पुण्यफल तथा कोटि होम कर पुण्यफल मिलता है (मत्स्य पुराण)। [26]

महीधर भाष्यानुसार – अश्वमेध यज्ञ से यह सम्पूर्ण भुवन निश्चय रूप से सुख–समृद्धि से पूर्ण हो जाता है। गण के सहित इन्द्र और सम्पूर्ण देवता, बारह आदित्य, उनचास मरूतों के साथ औषधि को हितकारी करते हैं। पर्यावरण संतुलन ऐश्वर्य–

वान इंद्रिययज्ञ शरीर और सन्तानों को श्रेष्ठ गुण सम्पन्न बनाते है।"अश्वमेध यज्ञ से आयु की वृद्धि होती है।" [27]

"जो अश्वमेध का यजन करते है उनकी सभी कामनाएँ पूर्ण होती है।अर्थात आत्मिक और भौतिक दोनों तरह के पुण्यफल प्राप्त होते हैं"। (शतपथ, 13/4/9/9) [28]

समग्र देशवासियों के वीर्य व बल की वृद्धि का अभ्यर्थन करना और राष्ट्र को समर्थता एवं दिव्यता बनाना ही अश्वमेध का मुख्य उदेश्य होता है। [29]

वेदों में एक प्रसंग विख्यात है जिसमें महाराजा वसु ने अश्व–मेध सम्पन्न किया तथा बृहस्पति उपाध्याय उसके होता थे। प्रजापति के तीन पुत्र ऋषियों में से श्रेष्ठ कपिल, कठ, तैत्तिरीय कणादि उसके ऋत्विक् थे। यह सर्वथा हिंसा रहित पवित्र यज्ञ था जो सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रति समर्पित था। (महाभारत शांतिपर्व 3–336) [30]

अश्व की अवधारणा

अश्व का प्रचलित अर्थ घोड़ा से लिया जाता है। सांसारिक अर्थ में यह ठीक है। किन्तु यज्ञीय और आध्यात्मिकता की दृष्टि से उसकी मौलिक व्याख्या ज्ञान इस प्रकार है – अश्व शब्द की निष्पत्ति – "अश्+ ववन् अश्नुते,अध्वावन व्याप्नोति" से हुआ है। अर्थात् – तीव्रगति वाला, मार्ग पर व्याप्त हो जाने वाला। एवं तेजोमय प्रकाशयुक्त। [31]

अश्व को गुणवाचक संबोधन के रूप में ही शास्त्रों में लिया गया है। निचे लिखे व्याख्यानों से यह और स्पष्ट हो जाता है – प्रसिद्ध ब्रह्म वेदों में वर्णित कौषीतकि ब्राह्मण के अनुसार – "इन्द्रों वै अश्वः" अर्थात् इन्द्र ही अश्व है। (कौषीतकि ब्राह्मण 15/4) [32]

यहाँ तक प्रसिद्ध गोपथ ब्रा. के अनुसार – सूर्य का सूर्यत्व (तेजस्विता) ही अश्व है। प्राण प्रदान करने वाला जिसे वेदों में अनेक स्थानों पर तेजोमय यज्ञाग्नि को अश्व कहा गया है। [33]

ऋग्वेद मंत्र 1/16/3/2 में कहा गया है कि अश्व सूर्य का प्रतीक है, वसुओं ने यज्ञीय अश्व (अग्नि को) सूर्य से प्रकट किया है। 'वीर्यं वै अश्वः' –शौर्य ही अश्व है, तथा 'श्री वै अष्वुः' अर्थात् सम्पदा ही अश्व है। 'अग्निर्वा अश्वः आज्यंमेधः' अर्थात्– अग्नि ही अश्व एवं घृत ही मेध है। [34]

स्वामी दयानंद सरस्वती जी के अनुसार – ईश्वर ही अश्व है। अर्थात् सारे संसार में संचारित होकर संव्याप्त होने वाला अश्व 'ईश्वर' है।जो गतिमान जगत में संचालित कार्यविधि में भी ईश्वरीय सत्ता के गुण विद्यमान हैं। (सत्यार्थ प्रकाश) [35]

शतपथ ब्राह्मण की दृष्टि में अश्वमेध

वेद दिव्य अनुभूतियों के आधार पर प्रकट हुआ है, इसलिए इसे सर्वश्रेष्ठ एवं प्रामाणिक माना जाता है। अश्वमेध के संबंध में शतपथ ब्राह्मण में जो लिखा है वह भी वेद वचन ही है। [40]

शतपथ के १३वें काण्ड (– श.ब्रा.13/2/2/1) के अनुसार – इन यज्ञों का राजा यह अश्वमेध है। अर्थात् वेदों में वर्णित अध्यात्मिक एवं भौतिक प्रगति लाभ के लिए जितने भी यज्ञ विधान है उनमें सबसे उत्तम अश्वमेध यज्ञ है। [41]

शतपथ ब्रा. मंत्र 13/1/9/9–10 में इस यज्ञ का प्रभाव का उल्लेख है –इस यज्ञ के प्रभाव से इच्छानुसार आवश्यकता के अनुरूप पर्जन्य की वर्षा होती है। जिससे प्रकृति एवं अन्न–दाता द्वारा संस्कारित अंकुरण होने लगते हैं, इसलिए अश्वमेध का प्रयोग बहुत ही व्यापक है। [42]

शतपथ ब्रा. 13/2/1/1 के अनुसार जो अश्वमेध का यजन करता है वह पूर्णांग (इन्द्रियों सहित स्वस्थ) हो जाता है। यह सबको प्रायश्चित रूप (भूलों को विरत करने वाला) एवं सबका उपचार भूलों के कारण जो रोग हो गये हों, उन्हें ठीक करने वाला भी है।पूर्ण रूप से 'शारीरिक और मानसिक दोनों तरह से स्वास्थ्य प्रदान करता है | [43]

शतपथ ब्राह्मण ग्रंथों के वर्णित मंत्रों में अश्वमेध और सूर्य दोनों के लिए ब्रह्मवर्चस् संबोधनों का प्रयोग किया गया है।अर्थात् सूर्य के समान तेजस्वी और आध्यात्मिक ऊर्जा अश्वमेध से ब्र–म्हवर्चस स्वतः प्राप्त हो जाता है। गायत्री महाविद्या भी ब्रह्मवर्चस् प्रदान करने वाली है। [44]

पश्चिमी इतिहासकारों के अनुसार अश्वमेध

देव संस्कृति के अध्ययन एवं अन्वेषण के लिए समर्पित पश्चिमी इतिहासकार ए.आर. बाशम के ग्रन्थ 'द वन्डर दैट वाज इण्डिया' में लिखा है कि संसार के विभिन्न भू–भागों के नि–वासियों में, यदि कहीं के लोगों ने अपने राष्ट्र को देवता और उपास्य माना है, तो वह देश है – भारत।

एमिल बेनवेनिस्ते के शोध अध्ययन ''वैदिक इण्डिया'' के अनुसार अश्वमेध राष्ट्रीय उपासना की वैदिक पद्धति के रूप में प्रचलित थी। इसे एक अनुष्ठान का रूप दिया गया था जिसे शासक श्रोत्रिय(मनीषी)और जन समूह सभी मिलजुल कर सम्पन्न करते थे। [45]

उपसंहार

अश्वमेध के बारे में वेदों, उपनिषदों एवं ब्राह्मण ग्रंथों एवं वान्मयों में वर्णित प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि अश्वमेध भी मूलतः प्रा–णसंचार प्रक्रिया के रूप में प्रजापति द्वारा किया गया था। सूर्य विश्व में प्राण संचार करने वाला है तथा गायत्री भी प्राण विद्या ही है।

पं.श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने अपने वैज्ञानिक परीक्षण हेतु जून 1955 में गायत्री तपोभूमि मथुरा में एक "सरस्वती यज्ञ" गायत्री जयंती के उपलक्ष्य में आयोजित किया तथा जुलाई–अगस्त 1955 की अखण्ड ज्योति में अश्वमेध के संबंध में लि–खते हैं कि "मनुष्य इस यज्ञ को करने से मेधा को प्राप्त होते हैं तथा पापों का नाश होता है। वांछित मनोकामनाऐं पूर्ण होती है

तथा परमपद की प्राप्ति सत्याचरण के कारण निश्चित ही होती है।" [46]

इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अश्वमेध क्यों इतना महान एवं दुष्कर प्रयोग कहा गया है ? इसे क्यों सब प्रकार के फल प्रदान करने वाला, यज्ञों का राजा कहा गया है ? इसका इतना अधिम महत्व होने पर भी इसे करने का साहस कोई विरले ही जुटा पाते है। दिव्य मेधा एवं दिव्य पुरुषार्थ को जाग्रत करके, उन्हें संयुक्त करके, राष्ट्रव्यापी स्तर पर यज्ञीय जीव–नक्रम से जन–जन को जोड़ देना ऐसा भारी दायित्वपूर्ण कार्य है, जिसे कोई असामान्य रूप से प्रखर तंत्र ही उठा सकता है। ऐसा ही कुछ पहले होता रहा है, तथा ऐसा ही कुछ करने का निर्देष महाकाल ने समयानुसार पुनः दिया है।

इसी चरण में अखिल विश्व गायत्री परिवार अश्वमेध अनु–ष्ठान के अनुरूप साये री व्यवस्थाऐं जुट गयी है। युगऋषि का प्रखर तप इसी निमित्त हुआ है। लम्बे समय की सा–धना से जाग्रत मेधा महाप्रज्ञा अब गतिशील पराक्रम को सही दिशा प्रदान करने के लिए संकल्पित है। इस राष्ट्र जन जा–गरण महायज्ञ में सभी अपनी आहुति इदं न मम् के नि–ष्काम भाव से प्रदान करें। अस्तु आश्वमेधिक अनुष्ठान का सफल प्रयोग एक बार पुनः राष्ट्र के नवनिर्माण एवं उति–ष्ठमय गरिमा प्रदान करने के लिए किया जाने वाला, एक युग निर्माण योजना श्रंखला के तहत नव अभियान है।

Compliance with ethical standards: Not required.
Conflict of interest: The authors declare that they have no conflict of interest.

सन्दर्भ

[1] ब्रह्मवर्चस, यज्ञ का ज्ञान–विज्ञान, वांग्मय–25, अखण्ड ज्योति सं–स्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 2022, पृ.सं. 31

[2] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 1992, पृ.सं. 22

[3] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 1992, पृ.सं. 22

[4] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 1992, पृ.सं. 22

[5] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 1992, पृ.सं. 22

[6] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 1992, पृ.सं. 22

[7] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 1992, पृ.सं. 22

[8] ब्रह्मवर्चस, यज्ञ का ज्ञान–विज्ञान, वांग्मय–25, अखण्ड ज्योति सं–स्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 2022 पृ.सं. 28

[9] ब्रह्मवर्चस, यज्ञ का ज्ञान–विज्ञान, वांग्मय–25, अखण्ड ज्योति सं–स्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 2022 पृ.सं. 37

[10] स्वामी रामसुखदास, गीता–प्रबोधनी टीका, अध्याय 4, श्लोक 25, संस्करण –49, गीताप्रेस गोरखपुर, उत्तरप्रदेश, संवत 2079, पृ.सं. 103

[11] ब्रह्मवर्चस, यज्ञ का ज्ञान–विज्ञान, वांग्मय–25, अखण्ड ज्योति सं–स्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 2022 पृ.सं. 34

[12] गोयन्दका हरिकृष्णदास, ईशादि नौ उपनिषद्, ईशावास्योपनिषद्–शांकरभाष्यसहित, मन्त्र–1, संशोधित संस्करण–66, गीताप्रेस गो–रखपुर, उत्तरप्रदेश, संवत 2074, पृ.सं. 28

[13] शर्मा आचार्य पं. श्रीराम, शर्मा माता भगवती देवी, योग वशिष्ठ, संशो–धित संस्करण –प्रथम खंड, वेदमाता, गायत्री ट्रस्ट, शान्तिकुंज हरि–द्वार, उत्तराखंड, 2018, पृ.सं.46

[14] पण्ड्या डॉ. प्रणव, युग–गीता, द्वितीय खंड, वेदमाता गायत्री ट्र–स्ट, शान्तिकुंज हरिद्वार, उत्तराखंड

[15] पण्ड्या डॉ. प्रणव, युग–गीता, द्वितीय खंड, वेदमाता गायत्री ट्र–स्ट, शान्तिकुंज हरिद्वार, उत्तराखंड

[16] पण्ड्या डॉ. प्रणव, युग–गीता, द्वितीय खंड, वेदमाता गायत्री ट्र–स्ट, शान्तिकुंज हरिद्वार, उत्तराखंड

[17] गोयन्दका हरिकृष्णदास, ईशादि नौ उपनिषद्, कठोपनिषद्–शांकरभाष्यसहित, वल्ली1, मन्त्र–17, संशोधित संस्करण–66, गीताप्रेस गोरखपुर, उत्तरप्रदेश, संवत 2074, पृ.सं. 87–88

[18] गोयन्दका हरिकृष्णदास, ईशादि नौ उपनिषद्, प्रश्नोपनिषद्–शांकरभाष्यसहित, प्रश्न 2, मन्त्र–8, संशोधित संस्करण–66, गीताप्रेस गोरखपुर, उत्तरप्रदेश, संवत 2074, पृ.सं.190

[19] गोयन्दका हरिकृष्णदास, ईशादि नौ उपनिषद्, प्रश्नोपनिषद्–शांकरभाष्यसहित, प्रश्न 2, मन्त्र–9, संशोधित संस्करण–66, गीताप्रेस गोरखपुर, उत्तरप्रदेश, संवत 2074, पृ.सं.191

[20] गोयन्दका हरिकृष्णदास, ईशादि नौ उपनिषद्, माण्डूक्योपनिषद् –शांकरभाष्यसहित, मन्त्र–6, संशोधित संस्करण–66, गीताप्रेस गोर–खपुर, उत्तरप्रदेश, संवत 2074, पृ.सं. 290

[21] शर्मा आचार्य पं. श्रीराम, शर्मा माता भगवती देवी, योग वशिष्ठ, संशो–धित संस्करण –प्रथम खंड, वेदमाता, गायत्री ट्रस्ट, शान्तिकुंज हरि–द्वार, उत्तराखंड, 2018, पृ.सं.47

[22] ब्रह्मवर्चस, यज्ञ का ज्ञान–विज्ञान, वांग्मय–25, अखण्ड ज्योति सं–स्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 2022 पृ.सं. 170

[23] ब्रह्मवर्चस, यज्ञ का ज्ञान–विज्ञान, वांग्मय–25, अखण्ड ज्योति सं–स्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 2022, पृ.सं. 171

[24] ब्रह्मवर्चस, यज्ञ का ज्ञान–विज्ञान, वांग्मय–25, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा, 2022, पृ.सं.191

[25] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 23

[26] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 23

[27] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 23

[28] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 23

[29] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 23

[30] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 23

[31] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 20

[32] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 20

[33] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 20

[34] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 20

[35] सरस्वती महर्षि दयानन्द, सप्ताम्समुल्लासः, सत्यार्थ प्रकाश, ८३वां संस्करण.आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, तिलक प्रिंटिंग प्रेस, मार्च 2015 दिल्ली–110006

[36] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 53

[37] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 54

[38] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 21

[39] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 21

[40] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 50

[41] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं.50

[42] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 51

[43] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 51

[44] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 51

[45] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 45

[46] शर्मा भगवती देवी, देव संस्कृति दिग्विजय अंक, अखण्ड–ज्योति मासिक पत्रिका, नवम्बर–संस्करण, अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि मथुरा 1992, पृ.सं. 62

doi.org/10.36018/dsiij.23.339